कबूतरा आदिवासी जाति की यथार्थ दासता : अल्मा कबूतरी (उपन्यास)

श्री नीलेश जाधव
संत गाडगे महाराज महाविद्यालय, कापशी

सारांश-

प्रस्तुत उपन्यास मैत्रयी पुष्पा द्वारा लिखित है। जिसमें झाँशी के आस-पास बुंदेलखंड पहाड़ियों में निवास करती भटकती कबूतरा नामक आदिवासी जनजाति के यातनाओं को मुखरित किया है। साथ ही उनकी जीवन पद्धति, संस्कृति एवं रोज़मर्रा की जीवनगत गतिविधियों का भी सटीकता से वर्णन किया है। दर्दर भटकती इस जनजाति की जीविकोपार्जन का एकमात्र साधन चोरी करना है। इस उपन्यास में दो समाजों का चित्रण हुआ हैं। एक कबूतरा आदिवासी समाज है तो दूसरा सभ्य समाज है, कबूतरा समाज पर सभ्य समाज हमेशा अपना अधिपत्य बानए खान छटा है। सभ्य और शिक्षित समाज का यह अमानवीय रूप को कबूतरा जनजाति को अपने शिकंजे में दबाए खान चाहता है, इसका हूबहू चित्र अंकित किया है।

बीज शब्द- समुदाय, संस्कृति, आदिवासी।

प्रस्तावना

भारत वर्ष में अनेक जातियों के समुदाय एकत्रित निवास करते हैं। अनेकता में एकता का नारा भी लगाया जाता है। भारत की सामाजिक संस्कृति में हरएक समुदाय अपने समाज का अस्तित्व बनाए रखने में प्रयत्नशील दिखाई देता है। वैसे तो प्रत्येक जाति-समुदाय का अपना एक अलग महत्त्व होता है। वैसा ही भारत की सामाजिक एवं संस्कृतिक धरोहर में आदिवासी समाज भी अपन महत्त्व और अस्तित्व रखता है। आदिवासी शब्द से सामान्यत: हम यह तात्पर्य लगा सकते है कि - जंगल के मूल निवासी। ये जातियाँ जंगलो में रहती हैं और इनकी सभ्यता का इतिहास लगभग पाँच हजार वर्ष पुराना है। जिसे आदिवासी जन समुदाय संभाले हुए है। इन क्षेत्रों पर इनकी स्वतंत्र सत्ता हुआ करती थी। भारत में जैसे-जैसे साम्राज्यवादी शक्तियाँ अपने राज्य की सीमा बढ़ाने हेतु प्रयास रत रही। वैसे-वैसे इन आदिवासी समुदायों के संशाधनों पर आक्रमण तथा अतिक्रमण कर इनका शोषण होना शुरू हो गया।

प्रथमत: आदिवासी शब्द को जान लेते हैं- 'आदिवासी' शब्द 'आदि' तथा 'वासी' इन दो शब्दों के योगा से बना है – जिसमें 'आदि' का अर्थ-आरंभ और 'वासी' का अर्थ- वास करने वाला। अर्थात 'आदिवासी' – आरंभ से जंगल में वास या निवास करने वाली प्राचीन प्रजाति है। इन्हें गिरिजन, वनवासी, भूमिपुत्र, वन्यजाति, जंगली, वनपुत्र आदिम नामों से भी संबोधित किया जाता है। आदिवासियों को परिभाषित करते हुए जेक्ब्स तथ स्टर्न लिखते है- "एक ऐसा ग्रामीण समुदाय या ग्रामीण समुदयों का ऐसा समूह जिसकी समान भूमि हो, समान भाषा हो, समान संस्कृतिक विरासत ही और जिस समुदाय के व्यक्तियों का आर्थिक दृष्टि से एक दूसरे साथ ओत प्रोत हो, जनजाति कहलाता है।"[1]

आदिवासी के विषय में रमणिका गुप्ता लिखती है, कि "आदियासी आर्यों से पूर्व का मनुष्य समूह है। वह इस भूमि का मूल मालिक है। सही अर्थ में वह ही क्षेत्राधिपति है।"[2]

आधुनिक हिंदी साहित्य में प्रत्येक समाज का चित्रण प्रतिबिंबित हुआ है। इक्कीसवी सदी के साहित्य में कई नयी विचारधाराओं का प्रस्फुटन हुया है। जिसमें स्त्री, दलित, किन्नर, किसान और आदिवासी आदि विमर्शों की उत्पत्ति का एका मात्र लक्ष्य यही था कि, समाज में स्थित हशिए पर चढ़े समाज को दृष्टिक्षेप में लाकर इन विमर्शों द्वारा मानव जाति का उन्नयन करना। मैत्रेयी पुष्पा द्वारा लिखित 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास सन 2000 में प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास में कथाकार ने एक नए विषय को समाजोंन्मुख रखा है। जिससे समाज के बहुतांश लोग अनभिज्ञ हैं। लेकिन मानव जीवन की वास्तविक अनुभूति याने यथार्थवादी चित्रण जिसमें मानव जीवन में संघर्षित घटनाओं तथा भुगतें भावनाओं का अनुभव होता है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने नयन चक्षुओं द्वारा समाज में घटित सभी प्रकारों के क्रियाकलाप तथा अनुभावों को ज्यों का त्यों यथार्थ रूप में चित्रित किया है।

कथाकार ने समाज में घटित वास्तविक अवस्था को चित्रित करने में सफल हुई हैं। वैसे तो साहित्य लेखन और जीवन का यथार्थ रूप चित्रित करना याने एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। साहित्य में मन का भावनाजन्य रूप सामने रखा जाता है तो यथार्थ याने बुद्धिगत परिकल्पना। जीवन के मूल को समझने हेतु युगीन यथार्थ के स्त्रोतों से एकात्म संबंध प्रस्थापित करना पड़ता है। इनसे उलझना-जूझना पड़ता है। इसके बाहरी रूप को जानकार कोई फायदा नहीं है। यथार्थ समाज से जुड़ा होता है। इन दोनों का नाता एक दूसरे अटूट है और एक के बीना दूसरे का अस्तित्व ही नहीं बनता या होता। इसके बारे में विचारवंत डॉ. त्रिभुवन के अपनी किताब में लेखा है कि, "सामाजिक यथार्थवाद का अर्थ होता है समाज की वास्तविक अवस्थाओं का यथार्थ चित्रण परंतु साहित्य के अंदर किसी भी वस्तु का चित्र उतार कर देना कठिन होता है क्योंकि साहित्यिक चित्र केमेरा द्वारा लिया गया चित्र नहीं होता है, बल्कि वह साहित्यकार के अनुभव एवं कल्पना के सुंदर रंग ढले होते है।"[3] प्रस्तुत उपन्यास के कबूतरा आदिवासी जनजातियों को उस वक्त के ब्रिटीश शासन द्वारा 'जन्मजात अपराधी' घोषित की गई इन सभी जनजातियों का यह दहकता दस्तावेज़ बयान करने मैत्रेयी पुष्पा सफल हुई है। प्रेमचंद द्वारा अपने कथा साहित्य में उपेक्षित या पिछड़े वर्ग को स्थान दिया है। लेकिन उन चरित्रों में और आदिवासियों में बहुत मातरा में अंतर है। मैत्रेयी पुष्पा द्वारा इस कथ्य का चयन करते हुए उनके दिमाग यह आया होगा कि यह विषय आज भी अछूता रह गया है या किसी साहित्यकार का ध्यान आकर्षित करने में ना कामयाब रहा हो। इस में कथाकार ने अल्मा कबूतरी में नायिका को प्रधान स्थान दिया है।

अल्मा कबूतरी उपन्यास नायिका प्रधान उपन्यास है। मैत्रेयी ने इसमें आदिवासी महिलाओं की समस्याओं को केंद्र में रखा है तथा स्त्री शोषण एवं संघर्ष को मुखरता प्रदान की है। इसके साथ–साथ उंच-नीच की समस्या, अनैतिक संबंध, अंधविश्वास, निर्धनता, बेरोगारी और अशिक्षा आदि समस्याओं को चित्रित किया है। कबूतरा जनजाति के प्रधान पात्र है- कदमबाई, अल्मा भूरी, राणा रामसिंह आदि तथा सभ्य समाज के पात्र है- मंसारम जोधा, कहेर धीरज, सुरजाभान, श्रीराम शास्त्री आदि। इस उपन्यास में कथाकार ने इयान सभ्य तथा आदिवासी समाजों का आपसी टकराव कदमबाई और मंसाराम इन पात्रों द्वारा चित्रित किया है। इस टकराव में हमेंशा कबूतरा जाति की हार होती है। कदमबाई एक नीडर औरत के रूप में चित्रित की है जो अपने पति की मृत्यु के बाद मंसाराम द्वारा किए गए आत्याचार का विरोध एवं प्रतिशोध लेने के लिए समाज से लड़ती-जूझती है। इस संघर्ष में बेटा राणा इनका शस्त्र है। लेकिन सभ्य समाज के लोगों जैसे ही सभी लक्षण उसके व्यक्तित्व में विराजमान हैं- वह चोरी करना, लूट करना या शराब पीना आदि बातों का साफ-साफ इन्कार केआर देता है। उसमें अपनी जाति के गुण देखकर कदमबाई अति निराश और दु:खी होती है। कदमबाई इसी सभ्य समाज के अशुद्ध वासना का वह शिकार हुई है और पुलिस द्वारा किए जानेवाले आत्याचार तथा प्रशासन द्वारा किए शोषण आदि के कार्न घृणा और प्रतिशोध की भावना इसके सीने में भड़क उठटी है। इनका समाज में अस्तित्व कैसा है इन चंद संवादों द्वारा समझा जा सकता है-

"हम लोग न खेतों के मालिक न मजदूर सो गोह खाते-खाते होठ चिपचिपा गए हैं। देखें तो धरती मैया कैसी-कैसी चीजें देती हैं ? जमीन में हमारा हिस्सा नहीं है।"[4]

भूरी उसके बेटे रामसिंह और उसकी बेटी अल्मा की भी कहानी है तथा उनके मानापमान, संघर्ष एवं पीड़ा की कहानी है। प्रस्तुत पात्रों के द्वारा कज्जा याने मैत्रेयी इसे सभ्य समाज लिखती है। यह शोषक वर्ग के रूप में चित्रित किया है। बाकी पात्र इसने संघर्ष करते हुए अपना एसबी कुछ दाँव पर लगा देते है। तथा इसमें वह लहूलुहान भी होते हैं। क्योंकि समस्त प्रशासन व्यवस्था ही इनके विरोध में खड़ी है। भूरी कज्जा समाज से टक्कर लेती है। वह अपने शरीर का सौदा कर के भी अपनी संतान को पढ़ा लिखाकर इस योग्य बनाना चाहती है, कि वह समाज में सन्मान भरी ज़िंदगी जी सके।

"पतिवीरता लुगाई अपने आदमी के संग सती होती है। अपने मर्द की ब्याहता खुद तो तब मानूँगी, जब रामसिंह को पढ़ा लिखाकर इसी कचहरी के दरवाजे खड़ा कर दूँगी। भले इस सफर में मुझे दस मर्दों के नीचे से गुजरना पड़े।"[5]

इतना सब कुछ होने के बावजूद भी रामसिंह शिक्षा प्राप्ति के बाद पुलिस का इसे उनका दलाल बनाकर उसी की मजबूरीयों का फाइदा उढ़ाती है। कदमबाई और मांसाराम शराब का ठेका लेता है, खुले आम कदमबाई के साथ रहता है। आल्मा आततायियों को साहस के साथ झेलती है, उसके साथ धोकाधड़ी होती है, दुर्जन उसे बेच देता है तथा सुरजभान उसे चुनाव के समय में नेताओं के आगे इनके सेजा पर सजा ने के लिए खरीदता है, अल्मा की देखभाल करनेवाला धीरज उसे उसकी चुंगुल से बचा लेता है। लेकिन श्रीराम शास्त्री के यहाँ अल्मा दुबारा फंस जाती है, श्रीराम शास्त्री की अकस्मित मृत्यु के कार्न उसकी जगह अल्मा को उमेदवारी दी जाती है। यहाँ इस उपन्यास की कथावस्तु समाप्त होती है।

वस्तुत: अल्मा कबूतरी नायिका अल्मा नहीं भूरी-कदमबाई तथा अल्मा का एकत्रित रूप है। जिसमें अन्य स्त्री पात्र सिमट जातें हैं। इसी कारण एक और एक ही स्त्री मूर्ति प्रतिष्ठित होती है और वह 'अल्मा' है। यह नाम एक प्रतीकात्मक रूप है- अल्मा याने 'एक आत्मा' है। इस उपन्यास के कबूतरा आदिवासी समाज का चित्र अत्यंत विदारक एवं दर्दनाक है, जंगला में निवास कर्ता, भटकता, यह समाज एसएसजे भी आफ्ना विकास एवं सुसंस्कृत से कौसों दूर हैं। जो हमेशा अनपढ़ जंगली तथा वनवासी समजा जाता रहा है। एक तरफ बाजारवाद भूमंडलीकरण तथा इंटरनेट, मीडिया के चलते विश्व का रूप लघुत्म बंता जा रहा रहा है। तो दूसरी तरफ सदियों से इन जंगली अबस्थाओं जीनेवाले इस समाज क्या आज भी विकास से अछूता रखना, क्या इनके जीवन में बदलाव या परिवर्तन को कभी देखा या सोचा भी जा सकता है। इस बदलाव की प्रक्रिया में अगर सभी जनजातियाँ सहयोग दे तो यह जाति भी शिक्षा पाकर अपने आप को बदलने में या बदलाव की मानसिकता में खुद को ढालने या अन्य समाज के साथ मजधार में अपना स्थान पाने की कोशिश करनी होगी तभी आगे जाकर जनसमुदाय का विकास या विकसीत रूप में देख पाना संभाव है।

संदर्भ :

1.डॉ. लक्ष्मणप्रसाद सिन्हा, 'भारतीय आदिवासियों की संस्कृतिक प्रकृति –पूजा और पर्व त्येहार, -पृष्ठ -88
2. रमणिका गुप्ता, आदिवासी कौन है?, पृष्ठ -27
3. प्रो. त्रिभुवन सिंह, हिंदी उपन्यास और यथार्थ, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी , 2018, पृष्ठ सं. 17
4. मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी उपन्यास , राजकमल प्रकाशन, -2016 पृ.संख्या-28
5. वहीं – पृष्ठ सं. 74